प्राचीन भारतीय इतिहास में पर्दा प्रथा एक समीक्षा

सुरेन्द्र सिंह
शोधार्थी, इतिहास विभाग,
महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक

सारांश

प्राचीन भारत में स्त्रियों के लिए पर्दा का प्रचलन कब से हुआ, प्राचीन भारत में यह प्रथा थी अथवा नहीं और यदि थी तो उसका स्वरूप क्या था, यह एक विचारणीय विषय है। कुछ उदाहरणों के आधार पर यह स्वीकार किया जाता है कि भारत में पर्दा–प्रथा का आरम्भ पूर्व–मुस्लिम काल में हो गया था। परन्तु कुछ विद्वान यह मानते हैं कि मुस्लिमों के आने से पहले प्राचीन भारत में यह प्रथा प्रचलित नहीं थी। हम यहां पर इस प्रथा की विभिन्न कालों में ऐतिहासिक सर्वेक्षण करेंगे तथ यह जानने का प्रयास करेंगे कि प्राचीन भारत में इस प्रथा का स्वरूप क्या था।

मुख्य शब्द : *परिस्थितियां, विचारणीय, मुस्लिम, स्त्री, पर्दाप्रथा, प्राचीन, स्वरूप*

प्रस्तावना

वैदिककाल में इस प्रथा के प्रचलन का कोई उल्लेख प्राप्त नहीं होता है और न ही ऐसी परिस्थितियां प्रतीत होती हैं जिनके आधार पर यह कहा जाए कि यह प्रथा उस समय कभी प्रचलन में रही होगी। इस काल में स्त्रियां पुरुषों के समान शिक्षा प्राप्त करती थी। प्रदा उस समय कभी प्रचलन में रही होगी। इस काल में स्त्रियां पुरुषों के समान शिक्षा प्राप्त करती थी और सामाजिक तथा धार्मिक समारोहों एवं उत्सवों तथा सभा एवं गोष्ठियों में बिना किसी प्रतिबन्ध के भाग लेती थी और विचारों का आदान–प्रदान करती थी। ऐसे समारोहों तथा उत्सवों में उनका सम्मिलित होना स्वागत योग्य माना जाता था।[1] ऋग्वेद में एक स्थान पर सभी आगन्तुकों से नव–विवाहित वधू को देखने या उसे आर्शिवाद देने के लिए कहा गया है।[2] वहीं दूसरे स्थान पर कामना की गई है कि वधू जन सभाओं में आत्मविश्वास के साथ बोल सके।[3] इसी प्रकार ऋग्वेद के विवाहसूक्त के अनुसार नव–विवाहिता, सास, श्वसुर, ननद और देवरों पर सम्राग्री बनकर जाती है। स्पष्टतः उनकी स्वतंत्रता की ओर संकेत करता है। स्त्री के लिए 'सभाबती' शब्द का व्यवहार हुआ है। जिससे यह स्पष्ट होता है कि स्त्रियां पर्दा नहीं करती थीं। स्वयंवर की प्रथा का प्रचलन भी यह स्पष्ट करता है कि इस समय स्त्रियों पर पर्दा का कोई बन्धन नहीं था।[4] किन्तु इसका यह मतलब नहीं था कि स्त्रियां अपने वरिष्ठ जनों से लज्जा नहीं करती थी। उत्तर वैदिककालीन ऐतरेय ब्राह्मण के उल्लेख से ज्ञात होता है कि पुत्रवधुएं प्रायः अपने श्वसुर से लज्जाती हुई दूर निकल जाती थीं।[5] इस प्रकार इन उल्लेखों से यह स्पष्ट हो जाता है कि भारतीय नारी से स्त्री

सुलभ शालीनता और सयमित आचरण की उपेक्षा अवश्य की जाती थी परन्तु पर्दा–प्रथा का कोई भी स्वरूप समाज में समक्ष नहीं था।

सूत्र–साहित्य में भी इस प्रथा का कोई उल्लेख नहीं मिलता है। आश्वलायन गृहसूत्र में ऋग्वेद के एक मन्तर के आधार पर कहा गया है कि जब वर वधू को लेकर अपने गांव लौटता था तो प्रत्येक ठहरने के सीान पर वह लोगों को दिखाई जाती थी।[6] निरुक्त के अनुसार कभी–कभी स्त्रियां अपने सम्पत्ति संबंधी अधिकारों के लिए न्यायालयों के समक्ष जाती थी।[7] इससे यह स्पष्ट होता है कि स्त्रियों पर किसी प्रकार का कोई बन्धन नहीं था। पाणीनी ने राजदरबार की स्त्रियों के लिए 'असूर्यम्पश्या' शब्द का प्रयोग किया है परन्तु पी.वी. काणे के अनुसार इससे केवल इतना ही स्पष्ट होता है कि नारियां अन्तःपुरों में ही निवास करती थी और वे राजप्रसादों की सीमा से बाहर जनसाधारण के समक्ष नहीं जाती थी।[8] इससे स्पष्ट होता है कि इस समय पर्दा–प्रथा का प्रचलन नहीं था।

महाकाव्य काल में कुछ उल्लेख ऐसे मिलते हैं जिसके आधार पर यह कहा जा सकता हे कि इस प्रथा का प्रारम्भ इस काल में हो गया था। राजपरिवारों और अभिजात वर्ग की स्त्रियां सम्मान और गरिमा को व्यक्त करने के लिए लज्जा भाव से अपने मुख पर अवगुंठन डाल लिया करती थी ताकि लोगों की दृष्टि उन पर न पड़े। रामायण से पता चलता है कि लंका युद्ध के उपरान्त सीता को जब विभिक्षण राम के पास ले जाने लगते हैं तो वानरों, भालुओं और राक्षसों का मार्ग से हटने की आज्ञा देते हैं जिससे उन्हें कोई देख न सके।[9] इसी प्रकार महाभारत में एक स्थान पर कौरवों की सभा में द्रौपदी का कथन है कि हमने सुना है कि प्राचीन काल में लोग विवाहिता स्त्रियों को सार्वजनिक सभाओं में नहीं ले जाते थे किन्तु चीरकाल से चली आ रही इस परम्परा को आज तोड़ दिया गया है।[10] इसी प्रकार दूसरे स्थान पर महायुद्ध के पश्चात् धृतराष्ट्र के वनागमन पर कहा गया है जिन स्त्रियों को सूर्य एवं चन्द्रमा ने भी कभी नहीं देखा था, वे राजमार्ग पर चल रही हैं।[11] इसी प्रकार रामायण में राम के वन जाने के अवसर पर सीता के विषय में कहा गया है कि जिस सीता को आकाश में विचरण करने वाले पक्षी भी नहीं देख सकते थे, आज उसी को राजमार्ग पर चलने वाले सभी लोग देख रहे हैं।[12] लेकिन साथ ही दूसरे स्थान पर कहा गया है कि विपत्ति के समय युद्ध, स्वयंवर, यज्ञ तथा विवाह के अवसर पर स्त्रियां उन्मुक्त होकर अथवा बिना आवरण के बाहर आ सकती हैं।[13] हमें कुछ ऐसे प्रमाण मिलते हैं जिससे पता चलता है कि राक्षस जाति में यह प्रथा प्रचलित थी। रावण के मरने पर मन्दोदरी कहती है कि आज मेरे मूंह पर घूंघट नहीं है। सभी स्त्रियां लाज छोड़ कर पर्दा हटाकर बाहर निकल आई हैं, आपको क्रोध क्यों नहीं होता।[14] इन उल्लेखों के आधार पर पी.वी. काणे का मत हे कि यद्यपि यह सही है कि राजपरिवारों तथा उच्चकुलों की स्त्रियां कुछ विशेष अवसरों को छोड़कर बाहर नहीं निकलती थीं। परन्तु इसका तात्पर्य यह नहीं है कि वे पर्दा करती थीं। क्योंकि महाकाव्यों में कहीं पर भी सामान्य युवतियों, राजकुमारियों एवं

नारियों यथा कुन्ती, गान्धारी, माद्री, द्रोपदी, उत्तरा, कौश्लया, सुमित्रा, कैकेयी तथा सीता आदि स्त्रियों का अपने मुख पर अवगुंठन करने का उल्लेख नहीं मिलता।[15] इसी प्रकार महाकाव्यों में अनेक ऐसे उल्लेख मिलते हैं जिनसे पता चलता है कि स्त्रियां बिना पर्दे के स्वतन्त्रतापूर्वक विचरण करती थी। महाभारत से पता चलता है कि जब भीष्म शरशय्या पर पड़े थे तो अनेक स्त्रियां भी उनके दर्शन के लिए आई थी।[16] इसी प्रकार जब श्रीकृष्ण धृतराष्ट्र के पास गये थे तो स्त्री, पुरुष और बालकों सहित सारे नगर ने ही महात्मा के दर्शन किया था।[17] द्रौपदी का जुआ खेलते समय सभा भवन में उन्मुक्त होकर आना पर्दा के विरुद्ध प्रबल प्रमाण है। इस प्रकार उल्लेखों के आधार पर कहा जा सकता है कि तात्कालीन समाज में पर्दा–प्रथा नहीं थी।

बौद्ध साहित्य से भी हमें पर्दा–प्रथा के प्रचलन का कोई प्रमाण नहीं मिलता। यद्यपि राजघरानों तथा उच्च वर्ण की कतिपय स्त्रियों के आवरणयुक्त रथों में विचरण करने का उल्लेख मिलता है।[18] परन्तु वे स्त्रियां प्रायः अवगुँठनहीन ही रहती थी और बिना पर्दे के स्वचछतापूर्वक मन्त्रियों एवं अधिकारियों से वार्ता करती थी। ललित–विस्तार से पता चलता है कि जब बुद्ध की पत्नी गोपा अपने पति के साथ जा रही थी तो उसे कहा गया कि वह अवगुंठन डाल ले। इस पर उसने कहा कि उसका शरीर संयत है, इन्द्रियां सुरक्षित हैं, आचार राग–रहित है और मन प्रसन्न है तब कृत्रिम आवरण से क्या लाभ?[19] जन साधारण में भी इस प्रथा के प्रचलन का कोई प्रमाण नहीं मिलता। जातकों में अनेक स्थलों पर स्त्रियों के सार्वजनिक स्थानों एवं समारोहों में स्वतन्त्रापूर्वक सम्मिलित होने का उल्लेख मिलता है।[20] जैन ग्रन्थों के अनुसार भी स्त्रियां बिना किसी प्रतिबन्ध के बाहर आ–जा सकती थी और सार्वजनिक समारोहों में स्वतन्त्रतापूर्वक भाग ले सकती थी। स्वयं श्रेणिक आदि राजाओं का अपने अन्तःपुर की रानियों के साथ महावीर के दर्शन करने का उल्लेख जैन ग्रन्थों में मिलता है। कतिपय ग्रन्थों में स्त्रियों के पुरुष वेश धारण कर अस्त्र–शस्त्र ग्रहण करने का उल्लेख मिलता है।[21] साथ ही तात्कालीन समाज में स्त्रियों के भिक्षुणी बनने, भिक्षुओं के साथ स्वतन्त्रतापूर्वक समाज में भिक्षाटन करने तथा बौद्ध मठों में भिक्षुओं के साथ शिक्षा प्राप्त करने से यह स्पष्ट संकेत मिलता है कि तात्कालीन समाज में इस प्रथा का प्रचलन नहीं था।[22] मौर्य एवं मौर्येत्तर काल में भी हमें इस प्रथा के स्पष्ट लेख नहीं मिलते हैं। कौटिल्य, मैगस्थनीज तथा अशोक के अभिलेखों में कहीं पर भी इस प्रथा के प्रचलन का उल्लेख नहीं मिलता है। रानी के विषय में मैगस्थनीज का कथन है कि वह पर्दा नहीं करती थी। वह हाथी एवं घोड़े पर सवारी करती थी तथा राजा के साथ शिकार पर भी जाती थी।[23] मनु, याज्ञवल्क्य तथा अन्य स्मृतिकारों ने भी तात्कालीन समाज व्यवस्था का चित्र प्रस्तुत करते हुए कहीं पर भी इस प्रथा के प्रचलन का उल्लेख नहीं किया है। इसी प्रकार मौर्योत्तर कालीन स्तूपों यथा सांची, भारहूत, बौधगया जिनके प्रवेश द्वारों पर कलाकारों ने विभिन्न सामाजिक दृश्यों को चित्रित किया है, में कही पर भी स्त्रियों पर पर्दे का अंकन नहीं मिलता है।

यही ठीक है कि मौर्योत्तर काल में राजनीतिक अस्थिरता के कारण समाज का सही चित्रण करना कठिन है। लेकिन गुप्त एवं गुप्तोत्तर काल के अध्ययन से हमें इस प्रथा के प्रचलन के कुछ प्रमाण अवश्य मिलते हैं। भास ने अपने 'प्रतिमा' नामक नाटक में सीता का अंकन करते हुए उसे रंगमंच पर पर्दे में उतारा है। यहाँ राम ने सीता से आग्रह किया कि वह अपना घूंघट हटा ले, जिससे उसके वियोग में रोती जनता एक बार पुनः मुखाकृति देख सके। यहाँ भास का सीता के संबंध में घूंघट का प्रयोग किसी परम्पागत प्रकृति का घोतक नहीं है। परन्तु सम्भवतः सीता को संकोच होता हो कि वह इतने बड़े जनसमुदाय के समक्ष कैसे इस दुःखी मुद्रा में अपने पति के साथ उपस्थित हो। अतः घूंघट की ओट भास ने उनके लिए कर दिया है। उनके दूसरे नाटक 'स्पप्नवासवदतम' में अंकित है कि उदयन की महारानी पद्मावती ने वधू बनने से पूर्व कभी पर्दा नहीं किया था। परन्तु विवाह के पश्चात् उसने पर्दा करना आरम्भ कर दिया था। वह नहीं चाहती थी कि उसका पति उसकी उपस्थिति में उज्जयीनी के राजदूत का स्वागत करे। यह बात उनके स्वाभाविकशील की अभिव्यक्ति करती है कि वह पति के समक्ष किसी भी पुरुष को देखना नहीं चाहती थी। महाराज उदयन ने उसके इस प्रतिरोध को अनसुना कर दिया और कहा कि अगर लोगों के सामने महारानी ने पर्दा किया तो लोग इस कार्य को अनुचित कहेंगें।[24] प्राचीनकाल में रानियां जहां रहती थी उसे 'अन्तःपुर', 'अवरोध' अथवा 'शुद्वान्त' कहा जाता था। प्रायः स्त्रियां जब श्रेष्ठ लोगों के पास जाती थीं तो आदर और सम्मान व्यक्त करने के लिए अवगुठंन कर लेती थीं। कालिदास के अनेक ग्रन्थों में अवगुठंन का उल्लेख हुआ हैं। अभिज्ञानशाकुन्तलम नाटक से विविद होता है कि जब शकुन्तला दुष्यंत की राजसभा में गयी तो उसने अपना मुख आवरण से ढक लिया था, जिसे उसने बाद में अपने मुख से हटा दिया था।[25] भृच्छकाटिकम में उल्लेखित है कि वधु बनते ही वसन्तसेना ने अपना मुख आवरण से ढक लिया था।[26] माघ जैसे इतिहासकार ने भी लिखा है कि नारी के मुख पर अकस्मात जब अवगुठंन हटता था तब एक क्षण के लिए उसके सौन्दर्य की छवि दिख जाती थी।[27] हर्षचरित में उल्लेखित है कि जब राजकुमारी राज्यश्री अपने भावी पति ग्रहवर्मा के समक्ष गई तो उसने अपने मुख पर लाल रंग का परिधान डाल रखा था।[28] इसी प्रकार कादम्बरी में भी बाण ने प्रतिलेखा को लाल रंग के अवगुठंन के साथ चित्रित किया है। स्वयं सम्राट हर्ष ने लिखा है कि यद्यपि कन्याओं के लिए पर्दे की आवश्यकता नहीं है लेकिन विवाह के बाद उससे इसकी अपेक्षा की जाती है।[29] भवभूति ने भी उल्लेखित किया है कि जब राम सीता के साथ परशुराम के निकट आदर व्यक्त करने गए तो उन्होंने सीता को अवगुठंन की सलाह दी थी।[30] इन साहित्यिक उल्लेखों से ज्ञात होता है तीसरी सदी ईस्वी के पश्चात् कुछ उच्च राजकीय परिवारों में पर्दे का प्रचलन शनै–शनै प्रारम्भ हो गया था। किन्तु इसके साथ–साथ हर्षचरित एवं कादम्बरी में अनेक ऐसे उल्लेख भी मिलते हैं जिससे पता चलता है कि स्त्रियां बिना पर्दे के स्वच्छतापूर्वक समाज में विचरण करती थी।

उपरोक्त साहित्यिक उद्धरणों के आधार पर ही ए.एस. अल्तेकर ने कहा कि ईस्वी सन् की प्रारम्भिक शताब्दियों से कुछ राजकीय तथा उच्च सम्भ्रात परिवारों में स्त्रियों के लिए पर्दा करना अच्छा समझा जाने लगा था। परन्तु जन–साधारण में इस प्रथा का कोई प्रचलन नहीं था। गुप्तकाल की अनेक स्त्री–प्रतिमाओं तथा अजन्ता, बाघ और एलोरा के चित्रों में कहीं पर भी अवगुंठन का कोई अंकन नहीं मिलता है। जबकि अनेक दृश्यों में स्त्री एवं पुरुषों के सम्मिलित झुण्ड सड़कों पर जाते हुए सा सार्वजनिक देवस्थानों में पूजा में सम्मिलित होते हुए चित्रित और उत्कीर्ण किये गए हैं। चीनी यात्रियों फाह्यान, àनसांग तथा इत्सिंग ने भी अपने वर्णन में इस प्रथा का उल्लेख नहीं किया है।

पूर्वमध्यकालीन ग्रन्थों में भी इस प्रथा के प्रचलन का उल्लेख नहीं मिलता है। तात्कालीन ग्रन्थों, भवभूति के नाटकों आदि में कहीं पर भी स्त्रियों के पर्दे का उल्लेख नहीं है। बृहत्कथामंजरी एंव कथासरितासागर जैसे कथा साहित्य में भी स्त्री के पर्दे का स्पष्ट संकेत नहीं मिलता है। बल्कि 'कथासरितसागर' में रत्नप्रभा नामक स्त्री पर्दे का विरोध करते हुए कहती है कि आर्यपुत्र अन्तःपुर की नारियों की रक्षा इस प्रकार हो, यह उचित नहीं। स्त्रियों पर पर्दा और नियन्त्रण ईर्ष्या से उत्पन्न मुर्खता है। इसका कोई उपयोग नहीं है। सच्चरित्र स्त्रियां अपने सदाचरण से ही सुरक्षित रहती है और किसी पदार्थ से नहीं। कल्हण की राजतरंगीनी (12वीं सदी) में भी पर्दा–प्रथा का कहीं कोई सन्दर्भ नहीं मिलता। जबकि प्रशासन में भाग लेने का वर्णन मिलता है।[31] ठीक इसी तरह से हमें चचनामा से प्राप्त होता है कि रानीबाई अपने पति दाहर की मृत्यु के बाद कासिम से लड़ी थीं।[32] इसी सदी के अरब लेखक अबूजैद ने लिखा है कि उसके समय में भारतीय नारियां पर्दे के बिना ही राजसभा में उपस्थित होती थीं।[33] अलबेरूनी ने भी इस प्रथा के प्रचलन का उल्लेख नहीं किया है।

ऐसा माना जाता है कि साधारण जनता में इसका प्रचलन मुस्लिम आक्रमणों के बाद ही प्रारम्भ हुआ। इसके लिए निम्नलिखित कारणों को उत्तरदायी माना गया है –

मुस्लिम समाज में औरतें पर्दे का प्रयोग अपने आवरण के लिए करती थीं। जब मुस्लमान यहां के शासक बने तो अपनी संस्कृति का प्रचलन करना उनका ध्येय था तथा उनके अधिनस्थ सामन्तों ने भी उनके आदर्शों को अपनाना प्रारम्भ कर दिया था। अतएव इस प्रथा का प्रारम्भ हिन्दुओं में हुआ।

भारतीय नारियां अधिकांश अशिक्षित थीं। इस समय अव्यवस्था व्याप्त थी। अतः उनकी रक्षा के लिए अनिवार्य था कि उन्हें जन सम्पर्क से अलग रखा जाए। इसके लिए पर्दे का प्रचलन शुरू किया गया।

उस समय मुस्लमान शासक भारतीय स्त्रियों के सौन्दर्य पर मुग्ध होकर ही बहुत सी लड़ाईयां कर बैठते थे। इनकी सुरक्षा के लिए तथा उनकी आंखों से ऐसी नारियों को बचाने के लिए ही इस प्रकार के आवरण का प्रयोग किया गया।

बाल विवाह के कारण भी इस प्रथा को बल मिला। इस समय की नारियां अल्पकाल में ही विवाहित हो जाने से अनुभवशून्य रह जाती थी। ऐसी अवस्था में वह दूसरे लोगों के अधिकार में बड़ी आसानी से चली जाती थी। इसलिए आवश्यक था कि उन्हें नियन्त्रित रखा जाए। इसलिए इस प्रथा को अपनाना प्रारम्भ किया गया।

निष्कर्ष

उपरोक्त उद्धरणों के आधार पर कहा जा सकता है कि 12वीं सदी तक भारत में पर्दा–प्रथा का प्रचलन नहीं था। यह ठीक है कि पूर्व मध्यकाल में यह प्रथा उच्च समुदाय और राजपरिवारों में प्रचलित थी, परन्तु जन–साधारण में इस प्रथा का प्रचलन नहीं था। डॉ. दशरथ शर्मा भी यह मानते हैं कि यह प्रथा शायद राजपूतों में प्रचलित थी, सम्पूर्ण समाज में नहीं। स्त्रियां प्रायः बिना किसी प्रतिबन्ध के उन्मुक्त और अवगुंठनहीन विचरण करती थी।

अन्ततः उल्लेखित कारणों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि भारत में पर्दा–प्रथा का जन–साधारण में प्रचलन 12वीं सदी के बाद ही हुआ, जब देश एवं समाज विदेशी आक्रमणों से आक्रान्त होने लगा था और भारतीय स्त्रियों के लिए सुरक्षा का प्रश्न महत्वपूर्ण बनने लगा था। परिणामस्वरूप व्यवस्थाकारों ने हिन्दू समाज में अपनी स्त्रियों की रक्षा के लिए पर्दा जैसा प्रतिबन्ध लगाया जो आगे चलकर भारतीय समाज का अभिन्न अंग बन गया और इसे सम्मान एवं प्रतिष्ठा की दृष्टि से देखा जाने लगा। परन्तु यह प्रथा केवल उत्तर भारत तक की सीमित थी, दक्षिण भारत इससे अछूता ही रहा।

संदर्भ ग्रन्थ :

[1] ऋग्वेद, 1/24/8, 1/163/3, अथर्ववेद, 14/1/21
[2] वही, 10/89/33
[3] वही, 10/85/26
[4] ऐतरेय ब्राह्मण, 4/7, 10/27/12
[5] वही, 12/11
[6] अश्वलायन गृहसूत्र, 1/8/7
[7] निरूक्त, 3/5
[8] पी.वी. काणे, धर्मशास्त्र का इतिहास, 1, पृ. 336
[9] मंजुला जायसवाल, बाल्मिकीयुगीन रामायण, पृ. 294
[10] महाभारत, 2/69/9

[11] वही, 15/16/13
[12] रामायण, 2/33/8
[13] वही, 2/116/28
[14] रामायण, 6/111/61–3
[15] पी.वी. काणे, पूर्वोक्त, 1, पृ. 336
[16] महाभारत, 7/121/4
[17] वही, 5/86/17
[18] जातक, 5/439, 6/31, 33, 167, 498
[19] जयशंकर मिश्र, प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास, पृ. 445
[20] जातक, 2/296, 4/490, 6/328
[21] देवेन्द्र कुमार गुप्त, प्राचीन भारतीय समाज एवं अर्थव्यवस्था, पृ. 342
[22] शिव स्वरूप सहाय, हिन्दू सामाजिक संस्थाएं एवं आर्थिक जीवन, पृ. 269
[23] मेक्रिण्डल, एशियंट इण्डिया एज डिस्क्राइब्ड बाई मैगस्थनीज एण्ड एरियन, पृ. 72
[24] स्वप्नवासवदता, अंक 6
[25] अभिज्ञानमशाकुन्तलम, 5/13
[26] मृच्छकटिकम, अंक 10
[27] जय शंकर मिश्र, पूर्वोक्त, पृ. 445
[28] हर्षचरित, अच्छवास, 4
[29] जयशंकर मिश्र, पूर्वोक्त, पृ. 444
[30] ए.एस. अल्तेकर, दि पोजिशन ऑफ विमेन इन हिन्दू सिविलाइजेशन, पृ. 169
[31] कथासरितसागर, 33/6–7
[32] राजतरिंगीनी भाग–VI, 332, नियोगी, हिस्ट्री ऑफ गढ़वालज, पृ. 228
[33] इल्यिट एण्ड डाऊसन, हिस्ट्री ऑफ इण्डिया एज टोल्ड बाई इट्स ऑन हिस्टोरियनस, भाग–1, पृ. 153–54